International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN :2581-9925, Impact Factor: 7.555, Volume 07, No. 02(III), April- June, 2025, pp. 101-106

जलवायु परिवर्तन प्रभाव और चुनौती

अनूप सिंह[1*] | डॉ. मदन लाल[2]

[1]शोध छात्र, भूगोल विभाग, निर्वाण विश्वविद्यालय जयपुर, राजस्थान।
[2]आचार्य, कला, मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान विभाग, निर्वाण विश्वविद्यालय जयपुर, राजस्थान।

*Corresponding Author: anoop.321205@gmail.com

सार

जलवायु परिवर्तन का तात्पर्य उन दीर्घकालिक और क्रमिक परिवर्तनों से है जो तापमान, वर्षा, वायु प्रवाह, धूप की तीव्रता एवं वायु गुणवत्ता जैसे जलवायु के मूल तत्वों में कई दशकों में घटित होते हैं। यह न केवल पर्यावरणीय असंतुलन का कारण बनता है, बल्कि सामाजिक, आर्थिक और जैविक स्तरों पर भी गहरे प्रभाव उत्पन्न करता है। औसत तापमान में वृद्धि, अनियमित वर्षा, सूखा, बाढ़, कृषि उत्पादकता में गिरावट और स्वास्थ्य संकट इसके प्रमुख परिणाम हैं। आईपीसीसी की छठी मूल्यांकन रिपोर्ट (AR6- 2018) इस बात पर बल देती है कि वैश्विक तापमान वृद्धि को 1.5^0 C तक सीमित करना अत्यंत आवश्यक है ताकि जलवायु संबंधी खतरों की तीव्रता को नियंत्रित किया जा सके। मानवजनित गतिविधियाँ जैसे औद्योगीकरण, वनों की कटाई, जीवाश्म ईंधनों का अत्यधिक उपयोग और अनियंत्रित शहरीकरण इन परिवर्तनों को और अधिक गंभीर बना रही हैं। इसके परिणामस्वरूप समुद्र स्तर में वृद्धि, ग्लेशियरों का तीव्र गति से पिघलना, महासागरीय तापमान में वृद्धि तथा अत्यधिक मौसमीय घटनाओं की आवृत्ति में वृद्धि स्पष्ट रूप से देखी जा रही है। रिपोर्ट यह भी दर्शाती है कि उपभोग व्यवहार, ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन और तकनीकी नवाचार के मध्य गहरा संबंध है। साथ ही, अल्पकालिक नीतियों को दीर्घकालिक वैश्विक जलवायु लक्ष्यों के अनुरूप बनाने की आवश्यकता पर बल दिया गया है। यह अध्ययन जलवायु परिवर्तन की जटिलताओं, उसके प्रभावों और संभावित नीतिगत एवं तकनीकी उत्तरों को उजागर करता है तथा इस वैश्विक चुनौती से प्रभावी ढंग से निपटने की दिशा में मार्गदर्शन प्रदान करता है।

शब्दकोशः *जलवायु परिवर्तन, मौसम, जनसंख्या, विकासशील देश, खाद्य उत्पादन।*

प्रस्तावना

जलवायु परिवर्तन एक प्राकृतिक घटना है, लेकिन मानव जाति ने इस प्रक्रिया को काफी हद तक बदल दिया है। जब हम कंप्यूटर का उपयोग केवल जलवायु पर प्राकृतिक प्रभावों का मॉडल बनाने के लिए करते हैं, तो हम 20 वीं शताब्दी के दौरान वैश्विक तापमान में हुई तीव्र वृद्धि की व्याख्या नहीं कर सकते। केवल तभी जब हम पिछले 150 वर्षों में वायुमंडल में ग्रीनहाउस गैसों के हमारे उत्सर्जन के प्रभाव को शामिल करते हैं, तभी हम हाल के दशकों में देखी गई तापमान वृद्धि को दोहरा सकते हैं। भविष्य में अस्वीकार्य रूप से खतरनाक जलवायु परिवर्तन से बचने में मदद के लिए, कई देशों और क्षेत्रों ने अपने ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने के लक्ष्य निर्धारित किए।

आाईपीसीसी (2008) के अनुसार, जलवायु परिवर्तन समय के साथ जलवायु में होने वाला कोई भी परिवर्तन है, चाहे वह प्राकृतिक परिवर्तनशीलता के कारण हो या मानवीय गतिविधियों के परिणामस्वरूप

आईपीसीसी शोधकर्ताओं के बीच यह आम सहमति है कि पूर्व–औद्योगिक काल से ग्रीनहाउस गैसों (मुख्य रूप से CO_2, CH_4, N_2O और O_3) की वायुमंडलीय सांद्रता में वृद्धि के कारण पृथ्वी की सतह गर्म हुई है।

आईपीसीसी (2008) की परिभाषा के अनुसार, ऐसा कोई भी परिवर्तन है जो दीर्घकालिक समयावधि में जलवायु के स्वरूप में देखने को मिले, चाहे वह प्राकृतिक कारणों से उत्पन्न हो या मानवीय गतिविधियों के परिणामस्वरूप। यह व्यापक वैज्ञानिक सहमति है कि औद्योगिक क्रांति से पहले की तुलना में वर्तमान समय में ग्रीनहाउस गैसों जैसे कि कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2), मीथेन (CH_4), नाइट्रस ऑक्साइड (N_2O) और ओज़ोन (O_3) की वायुमंडलीय सांद्रता में निरंतर वृद्धि हुई है, जिससे पृथ्वी की सतही तापमान में उल्लेखनीय वृद्धि दर्ज की गई है।

बीते 250 वर्षों में, वायुमंडल में इन गैसों की सांद्रता में क्रमशः लगभग 30: (CO_2), 145: (CH_4) और 15: (N_2O) की वृद्धि हुई है। इन उत्सर्जनों का प्रमुख स्रोत जीवाश्म ईंधनों का अत्यधिक उपयोग रहा है, जबकि भूमि उपयोग में परिवर्तन–जैसे वनों की कटाई और शहरीकरण तथा कृषि पद्धतियाँ भी इन गैसों के उत्पादन में महत्त्वपूर्ण योगदान देती हैं ।

इस प्रकार, जलवायु परिवर्तन न केवल एक वैज्ञानिक विषय है, बल्कि यह वैश्विक नीति और सतत विकास की दिशा में एक गहन चुनौती भी बन चुका है।

जलवायु परिवर्तन के कारण

वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन का मुख्य कारण ग्रीनहाउस गैसों का निरंतर और तीव्र मानवीय (मानवजनित) उत्सर्जन है। यह उत्सर्जन वैश्विक स्तर पर न केवल पर्यावरणीय प्रणालियों को प्रभावित कर रहा है, बल्कि मानवीय जीवन और आजीविका को भी गहरे स्तर पर प्रभावित कर रहा है। यह भी समझा जा रहा है कि अब तक जो परिवर्तन दर्ज किए गए हैं, वे भविष्य में संभावित गहरे और गंभीर परिवर्तनों की केवल प्रारंभिक झलक मात्र हो सकते हैं।

इस विषय में विभिन्न विचारधाराएँ पाई जाती हैं। कुछ विशेषज्ञों का मत है कि जब तक जलवायु परिवर्तन की प्रकृति, दर और प्रभावों के बारे में पूर्ण वैज्ञानिक स्पष्टता नहीं हो जाती, तब तक ठोस नीतिगत कदम उठाने में विलंब किया जा सकता है। दूसरी ओर, अनेक पर्यावरणविदों और वैज्ञानिकों का मानना है कि इसी अनिश्चितता के कारण तत्काल और सक्रिय कदम उठाना आवश्यक है, क्योंकि विलंब से होने वाला नुकसान अपूरणीय हो सकता है।

विशेष रूप से कृषि और पारिस्थितिक तंत्रों की दृष्टि से, यह अनिवार्य हो जाता है कि जलवायु परिवर्तन के संभावित प्रभावों का न केवल पूर्वानुमान लगाया जाए, बल्कि यह भी अध्ययन किया जाए कि कृषि प्रणाली कैसे अनुकूलन कर सकती है और साथ ही साथ इन प्रभावों को कम करने के उपाय क्या हो सकते हैं ।

जलवायु परिवर्तन को समझने और उसका अनुमान लगाने के लिए आईपीसीसी (Intergovernmental Panel on Climate Change) द्वारा प्रस्तावित जलवायु परिदृश्यों को आधार माना गया है। ये परिदृश्य सामाजिक–आर्थिक विकास की विभिन्न संभावनाओं पर आधारित हैं, जो जनसंख्या, तकनीकी प्रगति, ऊर्जा उपयोग, वैश्वीकरण और सतत विकास जैसे कारकों से संचालित होते हैं।

- आईपीसीसी द्वारा विकसित प्रमुख परिदृश्यों को चार समूहों में वर्गीकृत किया गया है–A1, A2, B1, और B2।
- A श्रेणी के परिदृश्यों में उच्च आर्थिक विकास और वैश्वीकरण पर बल दिया गया है।
- B श्रेणी के परिदृश्यों में सतत विकास, पर्यावरणीय चेतना और सामाजिक न्याय पर ज़ोर है।

इन परिदृश्यों के बीच मुख्य अंतर वैश्वीकरण की तीव्रता और तकनीकी नवाचार की दिशा में निहित है, जो ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन की मात्रा और स्वरूप को प्रत्यक्ष प्रभावित करते हैं ।

सर जे. ह्यूटन (2009) ने अपनी चर्चित पुस्तक Global Warming – The Complete Briefing esa IPCC द्वारा प्रकाशित एस आर ईएस परिदृश्यों का उल्लेख किया है। इन परिदृश्यों को चार मूल कथानकों पर आधारित विभिन्न विकास मार्गों में विभाजित किया गया है। प्रत्येक कथानक के अंतर्गत कई उप–परिदृश्य विकसित किए गए हैं, जिससे कुल 35 संभावित भविष्य परिदृश्य निर्मित होते हैं।

इन परिदृश्यों के माध्यम से यह आकलन किया जाता है कि विभिन्न सामाजिक–आर्थिक विकास मार्गों के अंतर्गत जलवायु और पर्यावरण पर किस प्रकार का प्रभाव पड़ेगा, और वैश्विक तापमान, समुद्र–स्तर वृद्धि तथा आपदा–घटनाओं में कैसे परिवर्तन आ सकते हैं

जलवायु प्रणाली के तत्व

वायुमंडलीय गैसें नाइट्रोजन, ऑक्सीजन और सूक्ष्म गैसें हैं, जिनमें उत्कृष्ट गैसें और ग्रीनहाउस गैसें (जल वाष्प, मीथेन, कार्बन डाइऑक्साइड, ओज़ोन और नाइट्रस ऑक्साइड) शामिल हैं। ये ग्रीनहाउस गैसें सूर्य से आने वाली कुछ ऊर्जा को सोख लेती हैं, जिससे प्राकृतिक ग्रीनहाउस प्रभाव पैदा होता है, जिसके बिना सामान्य तापमान बहुत कम होता और पृथ्वी पर जीवन के लिए बहुत ठंड होती। ग्रीनहाउस प्रभाव के तहत, पृथ्वी का औसत तापमान 60^0F (16^0C) है। समस्याएँ तब शुरू होती हैं जब मानव–जनित ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन से प्राकृतिक ग्रीनहाउस प्रभाव बढ़ जाता है। वैज्ञानिक अब भविष्यवाणी करते हैं कि पृथ्वी की जलवायु बदलेगी क्योंकि मानवीय गतिविधियाँ ग्रीनहाउस गैसों के निर्माण के माध्यम से वायुमंडल की रासायनिक संरचना को बदल रही हैं। ग्लोबल वार्मिंग को समझने के लिए, जलवायु को समझना आवश्यक है।

सामग्री और विधि

जलवायु परिवर्तन आज के समय की सबसे जटिल और बहुस्तरीय वैश्विक चुनौतियों में से एक बन चुका है। यह केवल वातावरण की प्राकृतिक परिवर्तनशीलता नहीं है, बल्कि यह उस मानवजनित हस्तक्षेप का परिणाम है जिसने वायुमंडलीय संरचना को असंतुलित कर दिया है। संयुक्त राष्ट्र फ्रेम वर्क कन्वेंशन ऑन क्लाइमेट चेंज स्पष्ट करता है कि जलवायु परिवर्तन को प्राकृतिक उतार–चढ़ाव से अलग देखा जाना चाहिए, क्योंकि वर्तमान बदलाव मुख्यतः मानवीय क्रियाकलापों, जैसे जीवाश्म ईंधनों के जलाने, वनों की कटाई और औद्योगीकरण के कारण हो रहे हैं।

पिछली एक सदी में वातावरण में कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) और अन्य ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन तीव्र रूप से बढ़ा है, जो ग्लोबल वार्मिंग का मुख्य कारण है। आईपीसीसी (IPCC) की रिपोर्ट के अनुसार, 19वीं सदी से अब तक वैश्विक सतही तापमान में लगभग 0.6^0C से 0.2^0C तक की वृद्धि दर्ज की गई है। यह तापवृद्धि दो प्रमुख अवधियों (1910–1945 और 1976 के बाद) में सर्वाधिक स्पष्ट रूप से देखी गई है, जिनमें तापमान औसतन 0.15^0C प्रति दशक बढ़ा।

20वीं सदी का अंतिम दशक, विशेषकर वर्ष 1998, अब तक का सबसे गर्म दशक और वर्ष रहा है। यह तापमान परिवर्तन सभी क्षेत्रों में समान नहीं है; बल्कि यह क्षेत्रीय भिन्नताओं के अनुसार बदलता रहता है। निचले वायुमंडल और विभिन्न भू–भागों में इसकी तीव्रता अलग–अलग रूप में देखी जाती है।

ग्लोबल वार्मिंग के दुष्परिणाम

मानव जनित ग्लोबल वार्मिंग के दुष्परिणाम के रूप में ग्लेशियरों का तेजी से पिघलना एक गंभीर पर्यावरणीय चेतावनी है। कई वैज्ञानिक अध्ययनों से ज्ञात होता है कि 20वीं सदी में ध्रुवीय क्षेत्रों के ग्लेशियरों में तीव्र पीछे हटने की प्रवृत्ति देखी गई है। वर्ष 1960 के बाद से, वैश्विक हिमाच्छादन में 10% की कमी आई है।

यूरोपीय आल्प्स जैसे क्षेत्रों में, शोधकर्ताओं ने यह पाया है कि ग्लेशियरों की भौगोलिक सीमा 30–40% तक घट चुकी है। आईपीसीसी के अनुसार, यदि यही प्रवृत्ति जारी रही तो 21वीं सदी के अंत तक यूरोप के अधिकांश अल्पाइन ग्लेशियर विलुप्त हो सकते हैं। इस प्रक्रिया का सीधा असर समुद्र तल में वृद्धि के रूप में देखा जा रहा है, जो 20वीं सदी के दौरान लगभग 0.10 से 0.20 मीटर तक बढ़ चुका है।

ग्रूर्गेरोव (2002) के अनुसार, वर्तमान दर पर यदि ग्लेशियरों का पिघलना जारी रहा, तो विशेष रूप से उत्तरी अमेरिका, दक्षिण अमेरिका, मध्य एशिया और उपध्रुवीय क्षेत्रों में जल स्तर और पारिस्थितिकी तंत्र पर विनाशकारी प्रभाव पड़ेगा।

जलवायु परिवर्तन के प्रभाव

हम पहले से ही जलवायु परिवर्तन के नकारात्मक प्रभावों को देख सकते हैं और बढ़ते उत्सर्जन के साथ ये और भी बदतर हो जाएंगे। मौसम तापमान में वृद्धि के अलावा, वर्षा के चक्र में भी परिवर्तन दिखाई दे रहें हैं; गर्म लहरें, बाढ़, सूखा और तूफान तथा बवंडर जैसी चरम मौसम की घटनाएं अधिक बार होती हैं और अधिक व्यापक रूप से फैलती हैं। बर्फ तापमान में वृद्धि से बर्फ पिघलती है। पिछले 30 वर्षों में ग्रीनलैंड और अंटार्कटिका की बर्फ की चादरों का द्रव्यमान काफी कम हो गया है, जिससे प्रति वर्ष औसतन 150 से 280 अरब टन बर्फ पिघल रही है। दुनिया भर के ग्लेशियर जैसे आल्प्स, हिमालय, एंडीज़ या रॉकीज़ भी हर साल पीछे हट रहे हैं, और कई के अगले 20–50 वर्षों में पूरी तरह से गायब होने का खतरा है। आर्कटिक सागर की बर्फ का विस्तार और मोटाई भी तेजी से घट रही है।

महासागर बर्फ पिघलने से समुद्र का स्तर तेज़ी से बढ़ता है। पिछली सदी में वैश्विक समुद्र का स्तर लगभग 20 सेमी बढ़ा है, जो छोटे द्वीपों और तटीय समुदायों के लिए ख़तरा है। बढ़ते तापमान के कारण महासागर भी गर्म हो रहे हैं, 70 के दशक से 0.33^0C तक, और महासागर द्वारा अवशोषित कार्बन उत्सर्जन में वृद्धि के कारण महासागरों का अम्लीकरण हो रहा है। इसका हमारे समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र पर गंभीर प्रभाव पड़ रहा है।

कृषि पर प्रभाव–जलवायु परिवर्तन के कारण बढ़ती जनसंख्या, फसलों की अधिक उत्पादन आवश्यकता और वाष्पीकरण की तीव्रता में वृद्धि से सिंचाई की आवश्यकता लगातार बढ़ रही है। विशेष रूप से भारत जैसे कृषि–प्रधान देश के लिए यह स्थिति अत्यंत चुनौतीपूर्ण है। अनुमान है कि वर्ष 2050 तक सर्दियों के तापमान में 3 से 4 डिग्री सेल्सियस तक वृद्धि हो सकती है, जिससे मानसून के दौरान वर्षा की मात्रा में 10% से 20% तक कमी आने की संभावना है।

वर्षा चक्र में यह अस्थिरता फसलों की उपज को प्रतिकूल रूप से प्रभावित कर सकती है। विशेषज्ञों का अनुमान है कि 2025 तक कृषि के लिए आवश्यक जल निकासी 2600 घन मीटर (वर्ष 2000 में) से बढ़कर 3200 घन मीटर तक पहुँच सकती है। कृषि वैज्ञानिकों के अनुसार प्रत्येक 1^0C तापमान वृद्धि से गेहूँ की पैदावार में लगभग 4.5 टन की गिरावट आ सकती है। उदाहरणस्वरूप, जहाँ गेहूँ उत्पादन का अनुमान 82 मिलियन टन था, वह बढ़ते तापमान के कारण घटकर 81 मिलियन टन रह गया है।

स्वास्थ्य पर प्रभाव–जलवायु परिवर्तन का प्रभाव केवल कृषि तक सीमित नहीं है; यह मानव स्वास्थ्य को भी प्रभावित करता है। तापमान में वृद्धि और आर्द्रता में बदलाव के कारण कई कीटों और रोगवाहक जीवों का प्रकोप बढ़ने की संभावना रहती है।

विशेष रूप से मलेरिया फैलाने वाले मच्छरों जैसे जीवों के प्रजनन चक्र में विस्तार हो सकता है और वे उन क्षेत्रों में भी फैल सकते हैं, जहाँ पहले वे अनुपस्थित थे। एक अध्ययन के अनुसार यदि तापमान में लगभग 3.8^0C और आर्द्रता में 7% की वृद्धि होती है, तो मच्छरों द्वारा रोग फैलाने की अवधि (transmission window) में भी उल्लेखनीय विस्तार हो सकता है, जिससे रोगों की संख्या और उनकी गहनता में वृद्धि होगी।

- **जलवायु परिवर्तन का वनों पर प्रभावः** विश्वस्तर पर जलवायु, वनस्पति व उसके स्वरूप का निर्धारक है, और इसका महत्वपूर्ण प्रभाव उसके वितरण, संरचना और जंगलों की पारिस्थितिकी पर पड़ता है। आईपीसीसी की तीसरी आकलन रिपोर्ट से संकेत मिलते हैं कि वन पारिस्थितिकी तंत्रा को भावी जलवायु परिवर्तन के गंभीर परिणाम भुगतने होंगे।

- **जलवायु परिवर्तन की अनुकूलन रणनीतियाँः** जलवायु परिवर्तन की बढ़ती चुनौती के प्रभावों को कम करने तथा उनसे निपटने के लिए अनुकूलन अत्यंत आवश्यक है। यह प्रक्रिया केवल किसी एक स्तर तक सीमित नहीं है, बल्कि स्थानीय, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय सभी स्तरों पर इसकी आवश्यकता अनुभव की जा रही है।

जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभावों का सामना करने हेतु स्थानीय परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए रणनीतियाँ तैयार की जानी चाहिए, जिनमें सरकारी संस्थानों, स्थानीय निकायों और समुदायों के सहयोग की अहम भूमिका होती है। इन रणनीतियों की प्रभावशीलता तभी संभव है जब वे स्थानीय अनुभव, परंपरागत ज्ञान और वैज्ञानिक उपायों का संतुलित समन्वय प्रस्तुत करें।

वर्तमान समय में समाज को इस दिशा में अग्रसर होने की आवश्यकता है, जहाँ पारंपरिक मौसम चक्र की जानकारी और पूर्वकालीन आजीविका प्रणालियों की समझ का उपयोग किया जाए। इससे समाज को बदलते जलवायु स्वरूपों का सामना करने में सहायता मिलेगी और पर्यावरणीय संतुलन को बनाए रखना संभव होगा।

निष्कर्ष

भारतीय उपमहाद्वीप में जलवायु परिवर्तन के संभावित परिदृश्यों और भविष्य की प्रवृत्तियों का संक्षिप्त रूप में विश्लेषण किया गया है। अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि जलवायु परिवर्तन का प्रभाव जल संसाधनों की उपलब्धता पर पड़ता है, जिससे कृषि, मानव स्वास्थ्य और जैव विविधता पर भी प्रतिकूल असर हो सकता है।

अनुकूलन रणनीतियों और तकनीकों पर चर्चा से यह भी स्पष्ट हुआ है कि यदि विभिन्न देश ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में कटौती हेतु शीघ्र और प्रभावी कदम उठाएँ, तो जलवायु परिवर्तन की तीव्रता को कुछ हद तक नियंत्रित किया जा सकता है।

इसके अतिरिक्त, यह भी आवश्यक है कि जलवायु से जुड़ी चरम घटनाओंकृजैसे कि बाढ़, सूखा, तूफान और अन्य प्राकृतिक आपदाओंकृसे निपटने के लिए हमारी नीतियाँ और तैयारी योजनाएँ अधिक सशक्त और वैज्ञानिक दृष्टिकोण पर आधारित हों।

हालाँकि जलवायु परिवर्तन की सटीकता को लेकर अभी भी कुछ अनिश्चितताएँ हैं, फिर भी यह संभव है कि क्षेत्रीय या जलग्रहण क्षेत्र स्तर पर उपयुक्त उपायों को अपनाकर जल संसाधनों पर इसके नकारात्मक प्रभावों को कम किया जा सकता है। इस दिशा में समन्वित प्रयास, वैज्ञानिक नवाचार, और नीति–निर्माताओं की सक्रियता अत्यंत आवश्यक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. Economic review, Directorate of Economics & Statistics, Government of Rajasthan, 2009; 10.
2. Draft Document, State Rural Drinking Water & Sanitation Policy, Government of Rajasthan, August, 2005.
3. Bandyopadhyay, A., A. Bhadra, N. S. Raghuwanshi and R. Singh. "Temporal trends in estimates of reference evapotranspiration over India." Journal of Hydrologic Engineering, 2009; 14(5): 508-515
4. Roy, Gitanjali Sinha. "The Last Super Power". Journal of Japanese Studies: Exploring Multidisciplinarity
5. Akermann, K., L. Herberg and A. Kalisch "How do small farmers respond to climate change in Rajasthan?" Rural, 2009; 21 4: 30-32.
6. The History and Development of AESS". Association for Environmental Studies and Sciences. Archived from the original on, 2016; 6.

7. "A Brief History of ESAC". ESAC. Retrieved 2 March 2022. Archived from the original on 28 January 2012. Retrieved 12 March 2012. "A Brief History of ESAC". Accessed, 2012; 12.

8. Singh, V.S., D.N. Pandey, A.K. Gupta and A.K. Ravindranath, 2010. 'Climate Change Impacts, Mitigation and Adaptation: Science for Generating Policy Options in Rajasthan, India' Rajasthan Pollution Control Board (RPCB), Jaipur, Rajasthan.

9. Smiley, Timothy (1 September). "Form and Content in Logic". Journal of Symbolic Logic, 1970; 35(3): 460–462. doi:10.2307/2270721. ISSN 0022-4812. JSTOR 2270721